देवर्षि नारद और उनकी वीणा

बाबा मुक्तानन्द द्वारा सुनाई गई एक कहानी पर आधारित

हज़ारों वर्ष पूर्व, प्राचीन भारत के मैदानी व पर्वतीय क्षेत्रों में, भगवान विष्णु ने, भगवान कृष्ण के रूप में इस धरा पर अवतार लिया था। वे दिव्य प्रेम व प्रज्ञान के मूर्तरूप, धर्म के पुनःस्थापक तथा योगेश्वर थे। भगवान विष्णु के एक समर्पित भक्त और सेवक थे, नारद मुनि।

नारद जी, देवताओं के ऋषि-देवर्षि तथा संगीतज्ञ और अपने युग के सर्वाधिक प्रवीण वीणा वादक थे। ऐसा कहा जाता है कि जब वे वीणा वादन करते थे तब ब्रह्माण्डीय संगीत के स्वर सुनाई देते थे। उन्हें कई सिद्धियों यानी चमत्कारी शक्तियों का स्वामी माना जाता था। और ये सभी महानताएँ होने के बावजूद देवर्षि नारद को एक पाठ सीखना शेष था।

एक दिन भगवान कृष्ण ने अपने विवाह में वीणा वादन के लिए नारद जी को आमन्त्रित किया। नारद जी ने स्वयं को गौरवान्वित महसूस किया और तुरन्त ही स्वीकृति दे दी। किन्तु उन्हें थोड़ा आश्चर्य तब हुआ जब उन्होंने विवाह स्थल के बारे में सुना जो किसी भी नगर या राजमहल से बड़ी दूर, हिमालय की वनाच्छादित तलहटी में दूरस्थ गाँव में था। जब वे वहाँ पर पहुँचे तो उन्हें लगा कि सम्भवतः वे किसी गलत जगह पर आ गए हैं — यह स्थान एकदम छोटा-सा व साधारण था। किन्तु वहाँ पेड़ों के बीच लालटेनें लटक रही थीं और उन्हें कहीं दूर से संगीत के स्वर भी सुनाई दे रहे थे।

बच्चों का एक समूह दौड़कर नारद जी के पास आया और उन्हें बताया कि उनके मुखिया की बेटी का विवाह उसी दिन भगवान कृष्ण के साथ सम्पन्न होने वाला है। वे नारद जी को उस झोपड़ी में ले गए जहाँ भगवान कृष्ण ठहरे हुए थे।

“नारद, बहुत अच्छा हुआ जो आप आ गए! ” भगवान कृष्ण ने कहा।

“आमन्त्रण पाकर मैं सम्मानित हुआ,” नारद जी ने कहा, यद्यपि वे मन ही मन सोच रहे थे कि वे और भगवान कृष्ण ऐसे स्थान पर क्या कर रहे हैं। “आइए, परिवार से मिलिए,” भगवान कृष्ण ने कहा। वे नारद का परिचय सभी ग्रामवासियों से कराने के लिए चल दिए मानों वे कोई महान राजसी लोग हों।

शीघ्र-ही समारोह आरम्भ हो गया। भगवान कृष्ण और उनकी वधू को वन फूलों की मालाएँ पहनाई

गईं। ग्रामवासी, भोजन, फूल और साधारण-से उपहार लेकर उनके चारों ओर एकत्र हो गए। फिर वहाँ भोजन तथा नृत्य, गायन व खेल आरम्भ हो गए। समारोह देर रात तक चलता रहा। वातावरण, हँसी व प्रेम तथा मधुर संगीतमय गीतों से भर गया।

तो भी नारद स्वयं को इस सबसे अलग महसूस कर रहे थे। यद्यपि उनका स्वागत बड़े ही आदर सत्कार के साथ किया गया था, किन्तु उन्हें ये वनवासी लोग अशिष्ट व कोलाहलपूर्ण लग रहे थे। उनके रीति-रिवाज और उनकी प्रथाएँ अजीब थीं। इसलिए जब भगवान कृष्ण ने उन्हें विवाह में आए अतिथियों के लिए वीणा बजाने हेतु आमन्त्रित किया तो उन्होंने कह दिया कि वे थक गए हैं। निश्चित ही उन्हें लगा होगा कि उनका वादन इस प्रकार के जनसमूह के लिए अधिक उत्कृष्ट है।

भगवान कृष्ण नारद जी के बहाने को समझ गए। वे दूसरे अतिथियों की ओर मुड़े। उन्होंने पूछा, "क्या यहाँ कोई और है जो वीणा बजाना जानता है? "एक अतिथि — वधू के काका — ने अपना हाथ उठाया। वे एक बलशाली दिखने वाले बढ़ई थे, उनके हाथ अपने कार्य के कारण कटे-फटे और नाखून खुरदरे थे। "अपनी वीणा उन्हें दीजिए," भगवान कृष्ण ने नारद से कहा।

नारद जी ने अविश्वास से भगवान कृष्ण को देखा। "मेरी वीणा उनके लिए बहुत ही नाजुक है। वे इसे बिगाड़ देंगे! " उन्होंने मन्द-स्वर में कहा।

"अपनी वीणा उन्हें दीजिए," भगवान कृष्ण ने पुनः कहा। अनिच्छा से नारद जी ने वैसा ही किया जैसा भगवान ने कहा।

उस व्यक्ति ने बड़े ही आदर के साथ वीणा को अपनी हथेलियाँ ऊपर की ओर करके ग्रहण किया। धीरे-से व सावधानीपूर्वक, उसने वीणा को अपने सिर से लगाया और प्रणाम किया। उसने कभी भी इतना सुन्दर वाद्य नहीं देखा था। वे नारद जी की ओर देखकर उदारता और स्नेह से मुस्कराए और पास की ही एक चट्टान पर वीणा बजाने के लिए बैठ गए। उनके नाखून वीणा को न छुएँ, इसलिए अपनी उँगलियों के पिछले भाग का उपयोग कर उन्होंने झंकार आरम्भ की। नारद प्रसन्न नहीं थे : बजाने का यह तरीक़ा सही नहीं है! वे इसे सुन नहीं पा रहे थे, इसलिए वे थोड़ी दूर चले गए। उन्होंने इस बात पर ध्यान ही नहीं दिया कि विवाह में आए दूसरे अतिथि शान्त हो गए हैं।

वह व्यक्ति भगवान के नाम का संकीर्तन कर रहा था। उसकी आँखें बन्द थीं, उसका शरीर झूम रहा था और वह सुन्दर संगीत सुना रहा था — जो प्रेम व ललक से भरा था। ऐसा लग रहा था मानों वह, उसका स्वर और वीणा एक ही हों। भगवान कृष्ण बड़े प्रेम से ध्यानपूर्वक सुन रहे थे।

वह व्यक्ति गाता जा रहा था, उसकी आवाज़ भक्तिभाव से इतनी परिपूर्ण थी कि दूसरे अतिथियों की आँखों से आँसू बहने लगे। उसके संगीत ने वातावरण को जगमगा दिया। उसके संगीत ने तो उस चट्टान के कणों को भी स्पर्श कर लिया जिस पर वह बैठा हुआ था। चट्टान नर्म होकर पिघलने लगी।

अन्ततः उसका गायन समाप्त होने लगा। अतिथिगण शान्त बैठे रहे, रात्रि के वातावरण में संगीत के अन्तिम स्वर भी धीमे होने लगे थे। वे कुछ क्षणों तक उसी प्रशान्ति में स्थिर बने रहे, फिर वह व्यक्ति उठा और उसने भगवान कृष्ण, उनकी वधू, तथा वहाँ उपस्थित हर एक को प्रणाम किया। उसे नारद जी नहीं दिखाई दिए, अतः उसने उनकी वीणा को सावधानी से चट्टान पर रख दिया और शान्तिपूर्वक छाया में चला गया। "नारद," भगवान कृष्ण ने पुकारा। "अब आप अपनी वीणा ले सकते हैं।"

नारद जी आगे बढ़े, किन्तु उस व्यक्ति द्वारा गाना बन्द करने के बाद वह चट्टान फिर से कठोर हो गई थी। वीणा उसमें धँस गई थी।

भगवान कृष्ण ध्यान से देख रहे थे, उनके मुखमण्डल पर एक व्यंग्यमिश्रित मुस्कराहट थी। "अरे नारद, अब क्या होगा?" वे बोले।

नारद, वीणा को बार-बार खींचते रहे परन्तु वह हिली भी नहीं। उनके आस-पास के लोग हँसने लगे। एक महान ऋषि जो अपनी असाधारण सिद्धियों के लिए विख्यात थे, वे एक चट्टान पर से अपनी वीणा तक को नहीं उठा पा रहे थे! नारद जी को शर्मिंदगी महसूस हो रही थी।

"मुझे समझ नहीं आ रहा है कि क्या हुआ," वे बोले, उनकी आँखें बड़ी हो याचना कर रही थीं।

भगवान कृष्ण ने कहा, "नारद, अब संकीर्तन क्यों नहीं करते, जिससे चट्टान फिर से पिघल जाए और तुम्हारी वीणा छूट जाए?"

अतः नारद जी ने संकीर्तन आरम्भ किया, किन्तु वे तो गर्व और शर्म से जल रहे थे और न तो केन्द्रण कर पा रहे थे और न ही प्रेम उमड़ रहा था। चट्टान कठोर ही बनी रही। वीणा उसमें धँसी रही। अन्ततः उन्होंने पराजय स्वीकार कर ली।

"यदि आपको अपनी वीणा चाहिए तो आपको अपने भाई से पुनः वीणा बजाने का अनुरोध करना होगा," भगवान कृष्ण ने मृदुलता से कहा।

नारद दूसरे संगीतज्ञ को ढूँढने लगे। "आप कुछ ऐसा कर सकते हैं जो मैं नहीं कर सकता," उन्होंने विनम्रता से कहा। "आपका संकीर्तन चट्टान को पिघला सकता है। यदि आप कर सकते हैं तो कृपया

मेरी वीणा को छुड़ा दीजिए।"

अतः वह व्यक्ति वापस आया और संकीर्तन आरम्भ किया। एक बार फिर, उसके स्वर में भगवान के प्रति उसका प्रेम प्रवाहित होने लगा और श्रोताओं के हृदय और साथ ही वह चट्टान भी पिघलने लगी। नारद जी बिल्कुल निकट बैठकर उसे ध्यान से देख रहे थे, वे इस बात के प्रति जाग्रत थे कि उन्हें एक पाठ सीखना है।

इस बार, उन्हें उस व्यक्ति के स्वर में भक्तिभाव सुनाई दिया। उन्होंने व्यक्ति के मुख और हाथों की सुन्दरता देखी। उन्होंने अलाव के प्रकाश में आसपास बैठे सभी लोगों के चेहरे देखे — लोग जिन्हें वे अजीब और अपरिष्कृत-अव्यावहारिक समझ रहे थे। उनमें भी अब वे ईश्वर का प्रकाश देख पा रहे थे। उन्हें अपने अन्तर में अपरिमित कृतज्ञता उमड़ती महसूस हो रही थी। उनके गालों से अश्रुधारा बहने लगी और उन्हें अपने अन्तर में, भगवान कृष्ण के प्रति, वीणा बजाने वाले व्यक्ति के प्रति, वधू तथा उसके सम्बन्धियों के प्रति, स्वयं अपने प्रति और वन, पर्वत तथा आकाश के प्रति सम्पूर्ण प्रेम का अनुभव हुआ।

उस दिन से, नारद जी, प्रेम व भक्ति के साथ भगवान का नामसंकीर्तन करने की शक्ति को समझ गए। उन्होंने आगे सिखाया कि विशुद्ध प्रेम का एक बार अनुभव हो जाने पर, साधक सर्वत्र ईश्वर का दर्शन करता है। नारद जी ने अपनी सिखावनियाँ प्रदान करने के लिए एक महान ग्रन्थ की रचना की। वह है : 'नारद भक्ति सूत्र।'

देवर्षि नारद कहते हैं,

"भक्तिमार्ग, ईश्वर प्राप्ति का सबसे सुलभ उपाय है।"

सूत्र ५८

और इसी के साथ यह कहानी समाप्त होती है, जिसका शीर्षक है, "देवर्षि नारद और उनकी वीणा।"

© २०१९ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।